

	Think India (Quarterly Journal) ISSN: 0971-1260 Vol-23, Special Issue-03 in collaboration with Indira Gandhi Government Girls Degree College, Raebareli, -229001, Uttar Pradesh, India Sponsored by Dept. of Higher Education , Govt. of U.P.	
---	--	---

NATIONAL SEMINAR ON YOGA FOR WELLNESS AND POSITIVE HEALTH
14th - 15th December, 2019 (Saturday-Sunday)

gB; kx ,d ifjp;

डॉ. आजेन्द्र प्रताप सिंह
असि. प्रोफेसर—स्नातकोत्तर, हिन्दी विभाग
फीरोज़ गाँधी कालेज, रायबरेली (उ.प्र.)

संराष

हठयोग की साधना स्थूल शरीर पर होती है। वह क्रमशः सूक्ष्म शरीर को प्रकाशित करती है। कहा जाता है कि 'ह' का अर्थ सूर्य और 'ठ' का अर्थ चन्द्र। दोनों के योग को ही हठयोग कहते हैं। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी जी का अभिमत है कि शास्त्र ग्रन्थों में हठयोग साधारणतः प्राण निरोधन—प्रधान साधना को ही कहते हैं। सिद्ध सिद्धान्त पद्धति में भी 'ह' का अर्थ सूर्य बतलाया गया है और ठ का अर्थ चन्द्र। सूर्य और चन्द्र के योग को ही हठयोग कहते हैं— "हकारः कथितः सूर्यष्टकारश्चन्द्र उच्यते।/सूर्यचंद्रम सोर्योणात हठयोगी निगद्यते।।"

हठयोग के दो भेद हैं—प्रथम में आसन, प्राणायाम तथा धौति आदि षट्कर्म का विधान है। इनसे नाड़ियाँ शुद्ध होती हैं। शुद्ध नाड़ी में पूरित वायु मन को निश्चल करता है और फिर परम आनंद की प्राप्ति होती है। दूसरे भेद में बताया गया है कि नासिका के अग्र भाग में दृष्टि निर्बद्ध करके आकाश में कोटि सूर्य के प्रकाश को स्मरण करना चाहिए और श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण रंगों का ध्यान करना चाहिए। ऐसा करने से साधक चिरायु होता है और हठात् ज्योतिर्मय होकर शिवरूप हो जाता है। इसीलिए इस योग को हठयोग कहा गया है।

प्रस्तावना —

"हठयोग की साधना स्थूल शरीर पर होती है। वह क्रमशः सूक्ष्म शरीर को प्रकाशित करती है। कहा जाता है कि ह का अर्थ सूर्य तथा ठ का चन्द्र। दोनों के योग को हठयोग कहते हैं।¹ डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी के मतानुसार—शास्त्रग्रन्थों में 'हठयोग' साधारणतः प्राण—निरोधक—प्रधान साधना को ही कहते हैं। सिद्ध सिद्धान्त पद्धति में 'ह' का अर्थ सूर्य बतलाया गया है और 'ठ' का अर्थ चन्द्र। सूर्य और चन्द्र के योग को ही 'हठयोग' कहते हैं—हकारः कथितः सूर्यष्टकारश्चन्द्र उच्यते।/सूर्यचंद्रमसोर्योणात हठयोगी निगद्यते।।" इस श्लोक की कही हुई बात की व्याख्या नाना भाव से हो सकती है। ब्रह्मानंद के मत से 'सूर्य' से तात्पर्य प्राणवायु का है

और चन्द्र से अपानवायु का, इन दोनों का योग अर्थात् प्राणायाम से वायु का निरोध करना ही 'हठयोग' है। दूसरी व्याख्या यह है कि 'सूर्य' इड़ा नाड़ी को कहते हैं और चन्द्र पिंगला को (हठ.3.15)। इसलिए इड़ा और पिंगला नाड़ियों को रोककर सुषुम्णा मार्ग से प्राण वायु के संचालित करने को भी 'हठयोग' कहते हैं। इस हठयोग को हठसिद्धि देने वाला कहा गया है। (प्राणतोषिणी: पृ. 835) वस्तुतः हठयोग का मूल अर्थ यही जान पड़ता है कि कुछ इस प्रकार अभ्यास किया जाता था जिससे हठात् सिद्धि मिल जाने की आशा की जाती थी।²

'दर्शने तु कृतेऽप्येवं साधकस्य न जायते।/यदा न सिद्धयते बोधिर्हठयोगेन साधयेत्॥' का संदर्भ देते हुए डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी जी लिखते हैं— "हठयोग शब्द का शायद सबसे पुराना उल्लेख गुह्य समाज में आता है, वहाँ बोधि प्राप्ति को विधि बता लेने के बाद आचार्य ने बताया है कि यदि ऐसा करने पर भी बोधि प्राप्ति न हो तो 'हठयोग' का आश्रय लेना चाहिए।"³

हठयोग के भेद :-

"हठाज्ज्योतिर्मयोभूत्वा ह्यन्तरेण शिवो भवेत्! / अतोऽयं हठयोगः स्यात् सिद्धिः सिद्ध सेवितः॥"⁴ का संदर्भ देते हुए डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी का अभिमत है कि "योग स्वरोदय में हठयोग के दो भेद बताये गये हैं। प्रथम में आसन, प्राणायाम तथा धौति आदि षट्कर्म का विधान है। इनसे नाड़ियाँ शुद्ध होती हैं। शुद्ध नाड़ी में पूरित वायु मन को निश्चल करता है और फिर परम आनंद की प्राप्ति होती है। दूसरे भेद में बताया गया है कि नासिका के अग्रभाग में दृष्टि निर्बद्ध करके आकाश में कोटि सूर्य के प्रकाश को स्मरण करना चाहिए और श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण रंगों का ध्यान करना चाहिए। ऐसा करने से साधक चिरायु होता है और हठात् ज्योतिर्मय होकर शिवरूप हो जाता है। इस योग को इसीलिए 'हठयोग' कहा गया है। यह सिद्धसेवित मार्ग है।"⁵

हठयोग की विधियाँ :-

"हठयोग की दो विधियाँ हैं— एक तो गोरक्षनाथ की पूर्ववर्ती जिसका उपदेश मृकण्डुपुत्र (मार्कण्डेय) आदि ने किया था और दूसरी गोरक्षनाथ आदि द्वारा उपदिष्ट प्रधान अर्थात् 'द्विधा हठः स्यादेकस्तु गोरक्षादिसुसाधितः।/अन्यो मृकण्डुपुत्राधैः साधितो हठसंज्ञकः॥' भेद यह बताया गया है कि पहली उन सभी आठ अंगों को स्वीकार करती है जिन्हें पातंजल योग के प्रसंग में हम देख आए हैं और दूसरी केवल अंतिम छः अंगों को, परंतु यह भेद बहुत अधिक मान्य नहीं है। हठयोग के ग्रंथों में अष्टांग योग की बात आती है। षडंग योग की भी।' गोरक्ष शतक में षडंगयोग की बात है और 'सिद्ध सिद्धान्त संग्रह' में अष्टांग योग की।"⁶

हठयोग का अभ्यास :-

"हठयोग का अभ्यासी शरीर की बनावट से अपरिचित रहकर सिद्धि नहीं पा सकता। मेरु दण्ड जहाँ सीधे जाकर वायु और उपस्थ के मध्य भाग में लगता है वहाँ एक स्वयंभू लिंग है जो एक त्रिकोण चक्र में

अवस्थित हैं। इसे अग्नि चक्र कहते हैं। इसी त्रिकोण या अग्नि चक्र में स्थित स्वयंभू लिंग को साढ़े तीन वलयों में लपेटकर सोई हुई भी बताई गई है। (गो.प. 1, 47) यह ब्रह्माण्ड में व्याप्त महाकुण्डलिनी रूपी शक्ति का ही व्यष्टि में व्यक्त रूप है, यह शक्ति ही है जो ब्रह्मद्वार को रोध करके सोई हुई है— येन द्वारेण गन्तव्यं ब्रह्मद्वारमनामयम्।/मुखेनाच्छाद्य तद्द्वारं प्रसुप्ता परमेश्वरी॥"। इसे जमाकर शिव से समरस कराना योगी का चरम लक्ष्य है।"⁷

इड़ा, पिंगला तथा सुषुम्णा नाड़ियाँ :-

"मेरु रज्जु के दोनो ओर दो नाड़ियाँ हैं। बायीं नाड़ी को इड़ा कहते हैं तथा दाहिनी पिंगला कहलाती है। कुछ इन्हें वाम तथा दक्षिण अनुसंवेदी रज्जु मानते हैं। चन्द्रमा इड़ा में तथा सूर्य पिंगला में संचरित होता है। इड़ा शीत लाती है। पिंगला उष्णता लाती है। इड़ा बायीं नासिका से तथा पिंगला दाहिनी नासिका से बहती है। श्वास एक घण्टा तक दाहिनी नासिका से तथा एक घण्टा बायीं नासिका से चलती है। इड़ा तथा पिंगला से जब श्वास चलती है तब मनुष्य सांसारिक कार्यों में ग्रस्त रहता है। सुषुम्णा के कार्यशील होने पर

वह जगत के लिए मृतवत हो जाता है। वह समाधि में प्रवेश करता है। योगी प्राण का सुषुम्ना नाड़ी में प्रवाहित करने का यथाशक्ति प्रयत्न करता है। सुषुम्ना नाड़ी को ब्रह्म नाड़ी भी कहते हैं। सुषुम्ना की बायीं ओर इड़ा है तथा दाहिनी ओर पिंगला। चन्द्र तमोगुणी तथा सूर्य रजोगुणी है। विष सूर्य का तथा अमृत चन्द्रमा का भाग है। इड़ा तथा पिंगला समय (काल) परिलक्षित करती है। सुषुम्ना काल का भक्षण करती है। सुषुम्ना सभी नाड़ियों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। यह विश्व तथा संसार गति तथा मुक्ति पथ की पालिका है। यह गुदा के पीछे स्थित है। यह मेरुदण्ड से संलग्न है तथा यह शिर में ब्रह्मरन्ध्र को जाती है। यह अदृश्य तथा सूक्ष्म है। सुषुम्ना के कार्यशील होने पर योगी के वास्तविक कार्य का प्रारम्भ होता है। सुषुम्ना मेरुदण्ड अथवा मेरुदण्ड के मध्य से होकर जाती है। जननेन्द्रिय के ऊपर तथा नाभि से नीचे कन्द है जो अण्डे के आकार का है। यहाँ से सभी 72000 नाड़ियाँ निकलती हैं। इनमें 72 सामान्य तथा साधारणतः ज्ञात हैं। योगियों को नाड़ियों तथा चक्रों का ज्ञान होना चाहिए। इड़ा, पिंगला तथा सुषुम्ना प्राण प्रवाहिनी है तथा

इनके देवता क्रमशः चन्द्रमा, सूर्य तथा अग्नि है।⁸

कुण्डलिनी :-

“कुण्डलिनी सर्पशक्ति अथवा प्रसुप्त शक्ति है। इसके साढ़े तीन कुण्डल हैं तथा मुख नीचे की ओर मेरुदण्ड के आधार मूलाधार चक्र में है। इसके जागरण के बिना समाधि की प्राप्ति संभव नहीं है। प्राणायाम में कुम्भक के अभ्यास से गर्मी उत्पन्न होती है तथा उससे कुण्डलिनी जागृत होकर सुषुम्ना नाड़ी से ऊपर की ओर जाती है। यौगिक साधक तरह-तरह के दर्शनों का अनुभव करता है। कुण्डलिनी छः चक्रों से गुजरती हुई अंततः सहस्रार अथवा सिर के सहस्रदल पद्म में स्थित भगवान शिव से मिल जाती है। अव निर्विकल्प समाधि की प्राप्ति होती है तथा योगी को मोक्ष तथा ईश्वरीय ऐश्वर्य प्राप्त होते हैं। व्यक्ति को धारणा के साथ (मन की एकाग्रता के साथ) प्राणायाम का अभ्यास करना चाहिए। जागृत कुण्डलिनी जिसे मणिपूरक चक्र को ले जाती है। पुनः गिरकर मूलाधार को लौट सकती है। इसे पुनः प्रयत्नपूर्वक उठाना चाहिए। साधक को पूर्णतः निष्काम तथा वैराग्य से पूर्ण होकर ही कुण्डलिनी जगाने के लिए प्रयत्न करना चाहिए। कुण्डलिनी सूत्र के समान है तथा भास्वर है। जागृत होने पर यह डण्डे से मारे गये सर्प के समान फुफकार करती है तथा शीघ्र ही सुषुम्ना विवर में प्रवेश कर जाती है। जब यह एक चक्र से दूसरे चक्र को गमन करती है तो मन की परतें एक-एक कर खुलती जाती हैं तथा योगी की विभिन्न सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं।”⁹

षट्चक्र का परिचय :-

चक्र आध्यात्मिक शक्ति के केन्द्र हैं। ये सूक्ष्म शरीर में स्थित हैं परन्तु भौतिक शरीर में भी इनके तदनुरूप केन्द्र हैं। इन चक्रों को खाली आँखों से नहीं देखा जा सकता है। केवल अतीन्द्रियदर्शी ही अपने सूक्ष्म नेत्रों से इन्हें देख सकता है। छः मुख्य चक्र हैं।¹⁰

1. मूलाधार चक्र :- यह चक्र रीढ़ के अधोभाग में पायु और शुष्क मूल के मध्य स्थित है। इसकी दल संख्या 04 है। वर्ण-व, श, ष, स तथा तत्व और गुण पृथ्वी, आकर्षण गंध तथा तत्व का रंग पीत है। वर्गाकार मंडल का आकार है बीज लं और वाहन ऐरावत है। देवता ब्रह्मा और वाहन हंस है। धातु शक्ति डाकिनी है। लिंग और योनि स्वयंभू, त्रैपुर त्रिकोण है। अन्यन्तत्व और इन्द्रिय गंध तत्व घ्राणेन्द्रिय पैर तथा पीठ कामाख्या है।¹¹ मूलाधार चक्र में चार दल हैं तथा स्थित गुदा में है।¹²

2. स्वाधिष्ठान चक्र :- यह चक्र मेरुदण्ड में मेढू के ऊपर स्थित है। इसकी दल संख्या 06 है। ब भ म य र ल इसके वर्ण हैं। इसके तत्व और गुण जल, संकोचन रस तथा तत्व का रंग श्वेत है। अर्द्धचन्द्र मण्डल का आकार है बीज व तथा वाहन मकर है। देवता विष्णु तथा वाहन गरुड़ है। धातु शक्ति राकिनी तथा अन्यन्तत्व और इन्द्रिय रस तत्व रसना हाथ है।¹³ स्वाधिष्ठान चक्र में छः दल तथा यह जननेन्द्रिय के स्थान पर स्थित है।¹⁴

3. मणिपूरक चक्र :- यह चक्र मेरुदण्ड में नाभि के पास स्थित है। इसकी दल संख्या 10 है। इसके वर्ण ड ढ ण न तथा द ध प फ है। तत्व और गुण तेज प्रसरण रूप है। तत्व का रंग लाल तथा मंडल का आकार त्रिभुज है। इस चक्र का बीज रं तथा वाहन मेष है। देवता रुद्र तथा वाहन वृषभ है। धातु शक्ति लाकिनी

है। अन्यन्य तत्व और इन्द्रिय रूप तत्व, चक्षु पायु है।¹⁵ मणिपूरक चक्र में दस दल है तथा यह नाभि में स्थित है।¹⁶

4. अनाहत चक्र :- यह चक्र हृदय के पास स्थित है। इसकी दल संख्या 12 है। क ख ग घ ङ च छ ज झ ञ ट ठ इसके वर्ण हैं। तत्व और गुण वायु गति स्पर्श तथा तत्व का रंग धूम्र है। मंडल का आकार षट्कोण है। बीज और वाहन य कृष्ण मृग तथा देवता ईश तथा धातुशक्ति काकिनी है। लिंग और योनि वायु, त्रिकोण अन्यन्तत्व स्पर्श, त्वचा उपस्थ तथा पीठ पूर्ण गिरि है।¹⁷ अनाहत चक्र में 12 दल हैं तथा हृदय में स्थित है।¹⁸

5. विशुद्धादय चक्र :- यह चक्र कण्ठ के पास स्थित है। इसकी दल संख्या 16 है। अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ लृ ऌ ए ऐ ओ औ अं अः इसके वर्ण हैं। तत्व और गुण आकाश अवकाश शब्द तथा तत्व का रंग श्वेत है। मंडल का आकार वृत्त है बीज और वाहन ह श्वेत हस्ती है। देवता सदाशिव तथा धातु शक्ति शाकिनी है।

अन्यन्यतत्व शब्द कान वाक् तथा पीठ जाल धर है।¹⁹ विशुद्ध में सोलह दल है तथा कण्ठ में स्थित है

6. आज्ञा चक्र :- यह चक्र ध्रुवों के बीच में स्थित है। इसकी दल संख्या 02 है। इसके वर्ण ह क्ष है। तत्व और गुण मन बीच ओं तथा देवता शंभु है। धातु शक्ति हाकिनी। लिंग और योनि इतर, त्रिकोण तथा अन्यन्य तत्व और इन्द्रिय महत् सूक्ष्म प्रकृति हिरण्य गर्भ है तथा पीठ वायु यान हैं।²¹ आज्ञा में दो दल है तथा यह दोनों भौहों के बीच में स्थित है।²²

Ikro: pØ को IgIkj कहते हैं जिसमें सहस्र दल है। यह शिर की चोटी में स्थित है। इन चक्रों के तदनुरूप भौतिक केन्द्र है जिनमें Sacral Plexus मूलाधार का, Prostatic स्वाधिष्ठान का, Solar Plexus मणिपूरक का, Cardiac Plexus अनाहत का, Laryngal Plexus विशुद्ध का तथा Cavernous Plexus आज्ञा चक्र का तदनुरूप कहते हैं।²³

हठयोगी की साधना :-

“शिवस्याभ्यन्तरे शक्तिः शक्तेरभ्यन्तरे शिवः।/अन्तरं नैव जानीमश्चंद्रचन्द्रिकयोरिव”-(सिद्ध सिद्धान्त संग्रह-4.37) “हठयोगी इस चेतना को शारीरिक स्तर पर पकड़ने का प्रयास करता है, निर्गुण या गुणातीत शिव को वह धारा के विरुद्ध चलकर पकड़ने का प्रयास करता है। उसकी यह यात्रा बड़ी कठिन है। वह भावावेश को इस क्षेत्र में त्याज्य समझता है। वह सच्चे अर्थों में निर्मम ज्ञानमार्गी है। विकट है उसकी गमनोत्कण्ठा। हाय, उसने कभी सोचा नहीं कि इतने विकट मार्ग में अग्रसर होने की ललक उसमें क्यों आई? अभिसार है, पर पता नहीं क्यों है! थोड़ा धैर्य धारण करके उसकी अभिसार यात्रा की सूखी कहानी सुनें तो आपको अचरज होगा। कोई नहीं जानता कि क्यों परात्पर परम शिव के मन में यह इच्छा उत्पन्न हुई कि मैं एक हूँ, अनेक होऊँ। परन्तु वह इच्छा उत्पन्न हुई थी। इच्छा परा-संविद् के विकास का नाम है। जहाँ चित्त-शक्ति पूर्ण विकसित नहीं है। वहाँ इच्छा भी नहीं है। पर यह हमारी सीमित दृष्टि का सत्य है। परम शिव की रहस्यमयी इच्छा का हेतु खोजना हमारे वश की बात नहीं। योगी भी नहीं जानता। जो हो वे गुणातीत परम शिव, सगुण शिव और सगुण शक्ति के रूप में अभिव्यक्त हुए और सृष्टि-प्रपंच शुरू हो गया। क्यों हुआ, यह हमारी पहुँच के बाहर की बात है।²⁴

‘उद्घाटयेत् कपाटं तु यथा कुन्धिकया हठात्।/कुण्डलिन्या ततो योगी मोक्ष द्वारं प्रभेदयेत्।। - (गो. श. 1, 51) अर्थात् “अन्यान्य विधियों से भी मोक्ष प्राप्त किया जाता है, परन्तु चाभी से जिस प्रकार ताला हठात् खुल जाता है, उसी प्रकार कुण्डलिनी के उद्बोधन से हठात् मोक्ष द्वार अनायास ही खुल जाता है। हठात् मोक्ष द्वार खोलने की विधि बताने के कारण भी इस योग को ‘हठयोग’ कहते हैं।²⁵

संन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. सहज साधना – हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ.सं. 82
2. नाथ सम्प्रदाय – हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ.सं. 137
3. नाथ सम्प्रदाय – हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ.सं. 137
4. प्रोण तोषिणी, पृ.सं. 835
5. नाथ सम्प्रदाय – हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ.सं. 137-38
6. नाथ सम्प्रदाय – हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ.सं. 138
7. नाथ सम्प्रदाय – हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ.सं. 138
8. प्राणायाम साधना – स्वामी शिवानंद सरस्वती, पृ.सं. 13-14
9. प्राणायाम साधना – स्वामी शिवानंद सरस्वती, पृ.सं. 15-16
10. प्राणायाम साधना – स्वामी शिवानंद सरस्वती, पृ.सं. 16
11. नाथ सम्प्रदाय – हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ.सं. 143
12. प्राणायाम साधना – स्वामी शिवानंद सरस्वती, पृ.सं. 16
13. नाथ सम्प्रदाय – हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ.सं. 143
14. प्राणायाम साधना – स्वामी शिवानंद सरस्वती, पृ.सं. 16
15. नाथ सम्प्रदाय – हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ.सं. 143
16. प्राणायाम साधना – स्वामी शिवानंद सरस्वती, पृ.सं. 16
17. नाथ सम्प्रदाय – हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ.सं. 143
18. प्राणायाम साधना – स्वामी शिवानंद सरस्वती, पृ.सं. 16
19. नाथ सम्प्रदाय – हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ.सं. 143
20. प्राणायाम साधना – स्वामी शिवानंद सरस्वती, पृ.सं. 16
21. नाथ सम्प्रदाय – हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ.सं. 143
22. प्राणायाम साधना – स्वामी शिवानंद सरस्वती, पृ.सं. 16
23. प्राणायाम साधना – स्वामी शिवानंद सरस्वती, पृ.सं. 16
24. सहज साधना – हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ.सं. 78
25. नाथ सम्प्रदाय – हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृ.सं. 139